International Journal of Management, IT & Engineering
Vol. 9 Issue 4, April 2019,
ISSN: 2249-0558
Impact Factor: 7.119Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

भारतीय अर्थव्यवस्था पर चुनावी खर्च का प्रभाव

डॉ. लाल कुमार साह
ग्रामः–मरुकिया,
पोस्टः–अंधराठाढ़ी
जिलाः– मधुबनी
पिन कोडः–847401

परिचयः–

वर्तमान समय में ससदीय चुनाव मे होने वाले खर्च एवं अर्थप्रबंधन की नीति के फलस्वरूप लम्बे अर्से से संकटग्रस्त भारतीय पूँजीवादी समाज व्यवस्था को संचालित करने वाली संसदीय प्रणाली और भी गहरे संकट में घिर गयी। यह संकट चौतरफा आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक है। एक पर एक होने वाले घोटालों से प्रधान मंत्री सहित शासक एवं विरोधी बुर्जुआ पार्टियों के सर्वोच्च नेता तक ही लोग नहीं जुड़े हुए हैं बल्कि पर्दे के पीछे से इन्हें नियंत्रित एवं संचालित करने वाली 'अफसरशाह–उद्योगपति–मिलिट्री कम्लेक्स' की तिकड़ी भी। हवाला घोटाला के बाद इस तिकड़ी का चरित्र दिन के उजाले की तरह स्पष्ट हो गया है।[1] यहाँ तक कि संसदीय पार्टियों के सर्वोच्च नता एकाधिकारी वित्तीय पूँजीपतियों के माध्यम से खुल्लम–खुल्ला घोटालों को प्रश्रय दे रहे हैं। भारतीय संसदीय चुनाव प्रक्रिया काले धन के ऊपर ही खड़ी है और ऐसा प्रतीत हो रहा है कि भविष्य में होने वाले चुनाव भी काले धन की मदद से संचालित होगा। लम्बे समय से काला धन एक समानान्तर अर्थव्यवस्था के रूप में चालू है। अधिक से अधिक मुनाफा अर्जित करने वाली सभी कंपनियाँ मुनाफे के बहुत ही छोटे हिस्से की आय–व्यय के रूप में लेखा–जोखा (आडिट एकाउंट) के अन्तर्गत लाती हैं और बड़े हिस्से को दो नम्बरी खाते के अन्तर्गत रखती ह। इस ढंग से बड़े हिस्से के ऊपर जो आयकर, बिक्री कर, सम्पदा कर, उत्पाद शुल्क आदि लागू होता है– उससे सरकार को वंचित कर दिया जाता है। आयात–निर्यात को भी अंडर एवं ओवर इन्वायस कम एवं ज्यादा का अवलम्बन लेकर टैक्स के चंगुल से वे साफ बच निकल जाती हैं। गैर कानूनी, कमीशन, रिश्वत एवं बैंक फ्राड तो आम है ही। यह काले धन का व्यापार मुल्क के अंदर और मुल्क से बाहर गैर–कानूनी ढंग से चलता रहता है। देशी–विदेशी मुद्राओं का गैर–कानूनी ढंग से आयात–निर्यात किया जाता है। चुनाव आयोग द्वारा मान्यता प्राप्त राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय बुजआ संसदीय पार्टियाँ हजारों

करोड़ रूपया चुनाव में खर्च करती ह। इसका स्रोत है काला धन। यही समूचे संसदीय प्रणाली एवं भारतीय अर्थवयवस्था के घोर अधःपतन का मुख्य कारण है।[2]

राजनैतिक क्षेत्र में भी बुर्जुआ संसदीय पार्टियों के अन्तर्गत कोई लोकतांत्रिक सोच–विचार काम नहीं करता है। हिन्दूवादी साम्प्रदायिकता को हिन्दुत्व के नाम पर फैलाया जा रहा है। दलितों के वोट डालने के अधिकार को उनके विकास के लिए प्रयोग न करके सरकारी कुर्सी प्राप्त करने के लिए जातिवाद–आधारित वोट बैंक के औजार के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा ह उद्योगपति, अफसरशाह–मिलिट्री कम्लेक्स की तिकड़ी के नियंत्रण में भ्रष्ट संसदीय प्रणाली समाज के हर तबके को घोर सांस्कृतिक–नैतिक अधःपतन का शिकार बना रही है। यह वर्तमान समय में चुनाव ऐसे ही घोर अनैतिक वातावरण में सम्पन्न हो रहा है। वर्तमान संसदीय चुनाव प्रक्रिया द्वारा विशेष पृष्ठभूमि तैयार की जा रही है जिससे चुनाव प्रक्रिया के व्यापारीकरण के साथ–साथ संसदीय प्रणाली को राष्ट्रपति पद प्रधान प्रणाली में ढाला जा सके। सड़ी व दूषित बुर्जुआ संसदीय प्रणाली का विकल्प वर्तमान मरणासन्न पूँजीवादी समाज व्यवस्था में निहित नहीं है। बल्कि इसका विकल्प तो समाजवादी व्यवस्था में सर्वहारा लोकतंत्र ही है। लेकिन यह समाज व्यवस्था में गुणात्मक परिवर्तन से ही संभव है। अतः भ्रष्ट संसदीय प्रणाली का विरोध करते हुए उन्नत सांस्कृतिक–नैतिक स्तर पर जनान्दोलन के माध्यम से सारे मुल्क में जनता की राजनैतिक शक्ति को संघर्ष के हथियार के रूप में विकसित करते हुए पूँजीवाद विरोधी समाजवादी क्रांति की तरफ दृढ़ता के साथ अग्रसर होना आवश्यक है।

आर्थिक स्थिति इतनी तेजी से बिगड़ती जा रही है। कि 65 प्रतिशत जनता को पहले ही गरीबी की रेखा से नीचे धकेल दिया गया है और शहरों और गांवों, दोनों के 16 करोड़ से भी ज्यादा लोगों को रोजगार–हीन बना दिया गया है जबकि कीमतों में बेलगाम वृद्धि, मुद्रा–स्फीति, और अधिकाधिक बढ़ते टैक्सों के कारण जनजीवन ज्यादा से ज्यादा शोचनीय व नारकीय बनता जा रहा है। निरंतर बढ़ती मंदी के रूझान ने पहले ही समूची अर्थव्यवस्था को अपनी गिरफ्त में ले लिया है। फलस्वरूप उद्योगों में ले–ऑफ व कारखाना–बंदियों की बाढ़ आ गई है जबकि ग्रामोणों अमीर लोगों के हाथों में भूमि के संकेन्द्रण की वजह से ग्रामीण–गरीबों के विशाल जन–समूह कंगाल व खस्ताहाल हो गए है। नई आर्थिक व औद्योगिक नीति और गेट समझौते पर दस्तखत और विश्व व्यापार

संगठन (WTO)में शामिल होने से देश खुशहाल व सम्पन्न हो जाएगा। लेकिन आम लोग पहले ही उदारीकरण की नीति के सहवर्ती रोगों के रूप में गहराती व बदतर होती जा रही बेरोजगारी की समस्या तथा जीवन–रक्षक दवाइयों सहित तमाम जरूरी वस्तुओं के मूल्यों में और ज्यादा वृद्धि के भुक्तभोगी होते जा रहे हैं। वस्तुतः नई आर्थिक नीति और गेट का लक्ष्य तो कृषि–अनुदान में अधिकाधिक कटौती करना है जिससे मध्यम वर्गीय व निर्धन किसानों पर सख्त मार पड़ना और कृषि उत्पादों की कीमतों में भारी उछाल आना स्वाभाविक है, और इसके फलस्वरूप लोगों के तमाम हिस्सों पर अनिवार्यतः इसका असर पड़ रहा है। जबकि विश्व व्यापार संगठन की इच्छानुरूप बौद्धिक सम्पदा अधिकारों की स्वीकृति व पेटेंट कानून संशोधन के कारण प्रौद्योगिकी (Technology)व विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में आगे शोध व अनुसंधान यानी रिसर्च में रूकावट खड़ी हो जाना अनिवार्य है।[3]

अतः सरकार विश्व व्यापार संगठन में शामिल होने के पक्ष में हस्ताक्षर कर के लोगों को बेवकूफ बनाने की, चाहे जितनी भी कोशिश क्यों न करें लेकिन यह तो दिन के उजाले की तरह स्पष्ट है कि हमारे देश के बड़े इजारेदार घरानों के लिए विशाल एवं अकूल मुनाफा सुनिश्चित करने तथा इस विशाल देश की सस्ती श्रम–शक्ति व कच्चे मालों व सामग्रियों के उन्मुक्त रूप से दोहन–शोषण के वास्ते विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए देश का द्वार पूरी तरह खुला छोड़ देने से नई आर्थिक नीति द्वारा आम लोगों का कोई भला व कल्याण होने वाला नहीं है, बल्कि उल्टे यह नीति उन के जीवन को तबाह जरूर कर डालेगी।

इस स्थिति का बदतरीन पहलू तो यह है कि माफियाओं व समाज–विरोधी तत्त्वों को विशेष रूप से चुनावों के दौरान इस्तेमाल करके, बुर्जुआ व पेटिबुर्जुआ पार्टियों ने राजनीति का अपराधीकरण कर डाला है और इस प्रकार एक ऐसी स्थिति पैदा कर दी गई है कि देश में अपराध की तूती बोल रही है। तमाम संसदीय पार्टियाँ बेरोजगार युवाओं को अनैतिक जीवन–यापन को अंगीकार करने के लिए प्रोत्साहित कर रही है। लोगों की नैतिक रीढ़ को चकनाचुर करने के लिए ही ये तमाम हथकंडे अपनाए जा रहे हैं। इसके अलावा देश के मुख्य राजनीतिक पार्टियों की हेय व घिनौनी संसदीय व अवसरवादी नीतियों के कारण, देश में संयुक्त वाम व लोकतांत्रिक जन–आंदोलन भी विकसित नहीं हो पा रहे हैं, जबकि साम्प्रदायिक व जातिवादी पार्टियों व शक्तियों के

अलावा, तमाम बुर्जुआ व पेटिबुर्जुआ पार्टियाँ अपने तुच्छ संसदीय दांव–पेंचो व आखेटों के लिए तथा लोगों की असली समस्याओं से ध्यान हटाकर नकली समस्याओं पर ध्यान जमाने के लिए जातिवादी, साम्प्रदायिक व तमाम विभाजनकारी व फूटपरस्त रूझानों को भड़का–उसका रही है। कुदरतन, किसी भी लोकतांत्रिक आंदोलन के अभाव में कहना होगा कि इस विषाक्त व दूषित परिवेश में देश के अन्दर साम्प्रदायिक, जातिवादी एवं अन्य विभाजनकारी ताकतें अत्याधिक तेजी के साथ बढ़ती जा रही है; फलस्वरूप अक्सर साम्प्रदायिक व जातिवादी दंगे–फसादों व अलगाववादी 'आंदोलनों' का ज्वार पैदा होता रहता है।[4]

ये तमाम चीजें मेहनतकश लोगों की एकता व संयुक्त संग्रामों को अपूर्णीय व असीम हानि पहुंचा रही है। मेहनतकश लोगो की एकता व संयुक्त संग्राम ही तो जन–स्वार्थ की सुरक्षा करने और केन्द्रीय व राज्य सरकारों के बढ़ते जा रहे घातक हमलों का प्रतिरोध करने की एकमात्र गारंटी ह। इन सब कुकृत्यों के अलावा सर्वोपरि चीज हैं बुर्जुआ व पेटिबुर्जुआ पार्टियों और उन के नेताओं के भ्रष्ट आचरण व आदतें। बोफोर्स घोटाले, प्रतिभूति घोटाले, चीनी घोटाले आदि के बाद 'हवाला केस' ने ता भंडाफोड़ ही कर डाला है कि किस प्रकार न सिर्फ कांग्रेस बल्कि बहुत–से आला अफसर सहित बी0जे0पी0, जनता दल आदि भी बदतरीन किस्म के भ्रष्टाचार में लिप्त हैं। प0 बंगाल का सट्टा–सरगना रशीद प्रकरण तथा अन्य राज्यों में भ्रष्टाचार के ऐसे ही बहुत–से तथ्य स्पष्ट रूप से उद्घाटित करते हैं कि किस प्रकार कोई भी शासक पार्टी भ्रष्टाचार से मुक्त नहीं है; सिर्फ चंद मामलों का पर्दाफाश हो पाया है जबकि बहुत–से मामलों का पिटारा अभी खुलना बांकी है। हवाला कांड ने ता साफ तौर पर पोल खोल डाली है कि किस तरह कारपोरेट इजारेदार घराने काले धन को सफेद धन में रूपान्तरित करने और विदेशी बैंकों में अकूल राशि स्थानान्तरित करने के साथ–साथ विभिन्न राजनैतिक पार्टियों के नेताओं, प्रशासन व सेना के आला अफसरों को भेड़–बकरियों की तरह खरीद लेते हैं। असलियत तो यह है कि देश में औद्योगिक नैतिक–अफसरशाह तिकड़ी बहुत–अरसा पहले विकसित हो चुकी है, जो पर्दे के पीछे रह कर हरेक चीज को नियंत्रित व संचालित करती है या यहाँ तक भी निर्णय करती है कि कौन–सी पार्टी सत्ता में आएगी।लेकिन आखिर यह दमघोंटू स्थिति मौजूद है क्यों? क्या ऐसी स्थिति सिर्फ कुछ पार्टियों व नेताओं के जन–विरोधी रूख तथा नीतियों की

वजह से ही है ताकि उन पार्टियों व नेताओं की जगह अन्य पार्टियों व नेताओं को सत्तासीन करके समस्या–समाधान हो सके? शासक पूँजीपति वर्ग की स्वार्थ–सिद्धि करने वाली सभी पार्टियाँ लोगों को विश्वास दिलाने और बड़े–बड़े वायदे करके लोगों के वोट झटकने की कुचेष्टा कर रही हैं।निःसंदेह, पार्टियों व नेताओं के मनोभाव व नीतियाँ महत्वपूर्ण होती है लेकिन इस सर्वग्रासी संकट के पीछे तो और भी ज्यादा गहरे व जटिलनिहित और क्रियाशील हैं जिन्हें अच्छी तरह ढूंढ़े व समझे बगैर इस सवाल का उत्तर हम खोज ही नहीं सकते।[5]

यह तो सुविदित तथ्य है कि हमारे देश का कोई भी चुनाव मतदान की हेरा–फेरी से मुक्त नहीं है। इस के अलावा, मतदान में धांधली व हेराफेरी जाली मतदान से शुरू होकर मतदान केंद्रों पर कब्जा करने या मतों की गिनती में साज–बाज व जोड़–तोड़ से शुरू करके असली मतपर्चियों की जगह नकली मतपर्चियां डालने तकविभिन्न रूप ग्रहण कर रही है, जिन्हें प्रशासकीय मतदान–धांधली के रूप में जाना जाता है। इस दिशा में कोई कारगर कार्रवाई करने की बजाए तथाकथित कठोर लेकिन दिल–बहलाने वाले कदम उठा कर चुनाव आयोग एक ऐसा परिवेश पैदा करने की कोशिश कर रहा है जिसमें लोगों को भरोसा व झूठी दिलासा पैदा हो जाए कि चुनाव सचमुच ही 'स्वतन्त्र व निष्पक्ष' हाने जा रहा है। लेकिन मतदान में धांधली का नग्न रूप होने के कारण लोगों का तो खुद चुनाव में ही विश्वास धीरे–धीरे खत्म होता जा रहा है। बुर्जुआ प्रेस चुनाव आयोग के बारे में भ्रांति व भ्रम पैदा करने की भी कोशिश कर रही है। लेकिन अभी हाल ही में खुद मिस्टर शेषन ने स्वीकार किया है कि जन–प्रतिनिधि कानून में समुचित संशोधन किए बगैर चुनाव को वास्तविक रूप एवं सही मायने में 'निष्पक्ष व साफ–सुथरा' नहीं बनाया जा सकताऔर, इस वर्ष जिस तरीके से चुनाव–कार्यक्रम को एक लम्बे चरण तक फैलाकर बनाया गया है, उससे पूरा शक पैदा होता है कि मतदान में धांधली व हेराफेरी और भी बड़े व व्यापक पैमाने पर और बड़े सूक्ष्म व कुटिल रूप में की जाएगी।[6]

निष्कर्षः–

अतः एक ऐसी नितांत नाजुक आर्थिक–राजनीतिक स्थिति में लोगों को चुनाव में हिस्सा लेना पड़ेगा, जन विरोधी ताकतों को हराना और शोषित जन–साधारण के गैर–संसदीय आंदोलनों को संगठित करके जन–स्वार्थ की सुरक्षा कर सकने वाली ताकतों की विजय को सुनिश्चित करना पड़ेगा। लेकिन इस उद्देश्य में सफल होने हेतु

लोगों के लिए जन–विरोधी और जन–समर्थक ताकतो के बीच फर्क करना और उन की शिनाख्त करना जरूरी है।देश की वर्तमान नाजुक स्थिति में लोगों की जरूरत है अपने हितों की रक्षा करने के लिए सशक्त लोकतांत्रिक जन–आंदोलनों को विकसित करना भारतीय संसदीय चुनाव प्रणाली में हो रहे फिजुल खर्चों के प्रति लोगों को जागरूक करना ताकि इस पर लगाम लगाया जा सके।

संदर्भ स्रोतः–

1. मिश्र, मिशन से मीडिया तक, नई दिल्ली, 2013, पृ. 45.
2. आर. के. सिंह, जनमत निर्माता में मीडिया की भूमिका, 2011, पृ. 90.
3. एस. सिंह, समावेशन प्रतिरूप एवं सिद्धांत, भोपाल, 2005, पृ. 60.
4. आर.पी. भल्ला, इलेक्शन इन इण्डिया, एस. चांद एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली, 2013, पृ. 53.
5. एल.एम. सिंघवी, भारतीय राजनीति और राजनीतिक दल समस्याएं और संभावनाएं, रिसर्च पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2014, पृ. 110.
6. आर.एल. गुप्ता, इलेक्टोरल पॉलिटिक्स इन इण्डिया, डिस्कवरी पब्लिकेशन, दिल्ली, 2011, पृ. 97.